क्या आप जानते हैं?

क्या आप जानते हैं ?

'क्या आप जानते हैं ?' निरंतर द्वारा प्रकाशित की गई यह नई किताब है। इस किताब में हमने कोशिश की है आपके साथ कई रोचक जानकारियां बांटने की। जीवन से जुड़ी कई चीज़ें हैं जिन्हें हम रोज़ाना देखते हैं, लेकिन शायद उनके बारे में इतना सोचते नहीं। छुई-मुई का पौधा छूने पर क्यों बंद हो जाता है ? जुगनू क्यों चमकते हैं ? कुछ ऐसे सवालों के जवाब आपको मिलेंगे इस किताब में। कुछ जानकारियां विज्ञान से भी जुड़ी हैं। बिजली का तार छूने पर करंट क्यों लगता है ? दूध क्यों उबल कर गिरता है ? विज्ञान के ये रहस्य खुलेंगे इस किताब में। क्या आप जानते हैं में इतिहास के कुछ रोचक पन्ने भी खुलेंगे। जैसे, हर जगह पी जाने वाली चाय की कहानी। यह हमारे घरों तक कहां से आई, कैसे आई ? इस किताब में आपकी मुलाकात कुछ अनोखे जानवरों से भी होगी। जैसे नर पेंगुइन जो बच्चों की देख–रेख की अच्छी मिसाल जमा सकते हैं। 'क्या आप जानते हैं' में आपको अपने ही शरीर से जुड़ी जानकारियां भी मिलेंगी। आंसू क्यों निकलते हैं ? क्यों कुछ लोग बाएं हाथ से काम करते हैं ? गंजेपन का क्या राज़ है ?

आशा है कि आपको इस किताब को पढ़ने में उतनी ही रुचि होगी, जितनी हमें इन सवालों के जवाब ढूढंने में हुई। अगर आपके और भी सवाल हैं, तो क्यों न उनके जवाब खोजें और हमें भी लिख भेजें।

क्या आप जानते हैं ?

बिल्ली एक, किस्से अनेक

रास्ते चलते अचानक रुके और वापिस मुड़ लिए। काली बिल्ली ने रास्ता जो काट दिया। बिल्ली के रोने की आवाज़ सुनकर दिल बैठ गया। ज़रूर कुछ बुरा होने वाला है। बेचारी बिल्ली ! कितना अशुभ मानते हैं हम उसे। लेकिन कई देशों में इसका उल्टा है। सदियों से वहां बिल्ली को शुभ माना गया है।

तीन हज़ार साल पुरानी बात है। मिस्र नाम के देश में बिल्ली का बहुत सम्मान था। बिल्ली के मरने पर लोग पूरे दस दिन का शोक रखते। शोक में परिवार वाले अपनी भौहें मुंडवा लेते। बिल्ली की याद में मंदिर तक बनवाए जाते। उसे देवी के रूप में पूजा जाता। राजघरानों की बिल्लियों को तो अमर बनाने की कोशिश की जाती। मरने के बाद इनके शरीर पर एक खास लेप लगाया जाता। यह लेप शरीर को सड़ने से बचाए रखता।



पुराने ज़माने में कुछ लोग पानी के जहाज़ों में बिल्लियां रखते थे। लोगों का मानना था कि बिल्ली आने वाले खतरों को झट पहचान लेती है। जापान में पानी के जहाज़ों में बिल्ली रखने का एक और कारण था। इन जहाज़ों में खाने का सामान ले जाया जाता था। इसे चूहों से बचाती थीं बिल्लियां।

जापान में बिल्ली का इतना मान था कि उसे राजदरबारी का ओहदा दिया गया। यहां पर बिल्लियां घरेलू जानवर की तरह पाली जाने लगीं। लेकिन राघरानों से जुड़े होने के कारण इनकी स्थिति हमेशा शानदार





रही। पर जापान के ही कुछ लोग बिल्ली को डायन और चुड़ैल का रूप मानते थे। उनका मानना था कि बिल्ली बूढ़ी होकर आदमियों की ज़ुबान समझने लगती है। इंग्लैण्ड देश में भी लोग बिल्ली को शौक से पालते। लेकिन यह भी माना जाता कि बिल्लियों का जादू टोने के लिए इस्तेमाल होता है।

इस्लाम धर्म के पैगम्बर हज़रत मुहम्मद को बिल्लियों से बहुत प्यार था। अगर बिल्ली नमाज़ के समय उनकी चटाई पर लेटी होती तो वे उसे नहीं उठाते। आज भी हज जाते समय बहुत से लोग अपने साथ बिल्ली ले जाते हैं। और उसका पूरा ख्याल रखते हैं।



अगली बार बिल्ली रास्ता काटे तो घबराइएगा मत ! इसके पूर्वज ऐसे थे जिनकी शान मन्दिर, मस्जिद और महलों तक फैली थी।

बचिए खतरे से

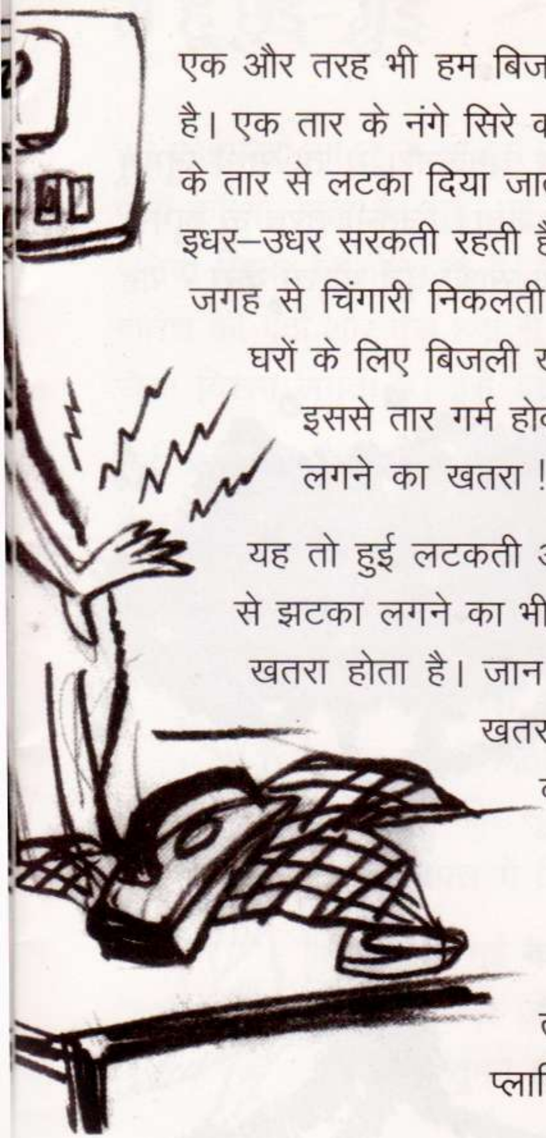
कई महीनों तक लोग बात करते रहे। बहुत बुरी आग लगी थी मानिकपुर में। देखते ही देखते सारा पंडाल जल कर राख हो गया। गांव के दस लोग मारे गए थे। बाद में पता चला कि बिजली के तारों को ठीक से जोड़ा नहीं गया था। इसी वजह से चिंगारी निकली और सब कुछ तबाह हो गया !

कुछ दिन बाद शाहपुर गांव में गीले तारों से करंट लगने से तीन बच्चे मर गए। ऐसी घटनाएं अक्सर सुनने को मिलती हैं। अपनी ही गलतियों की वजह से हम ज़िंदगी से हाथ धो बैठते हैं। बिजली के कामों में लापरवाही बरतते हैं। भूल जाते हैं कि बिजली कितनी खतरनाक हो सकती है।



आइए बिजली के खतरों को समझें। हम सब ने बिजली का तार तो देखा ही है। उस पर प्लास्टिक की एक पर्त चढ़ी होती है। यह पर्त ही करंट को हम तक पहुंचने से रोकती है। पर बिजली का काम करते हुए हम इसकी परवाह नहीं करते। जब भी बिजली की व्यवस्था करनी हो, हम झट उस पर्त को उतार देते हैं। फिर दो नंगी तारों को जोड़ देते हैं। पर यह जोड़ पक्के नहीं होते। बस दोनों तारों को इकट्ठा मोड़ दिया जाता है। इस वजह से दोनों तारों के बीच थोड़ी जगह रह जाती है। बिजली का तार करंट से होते हुए आता है। पर ढीले जोड़ की वजह से यह करंट तार से निकल कर हवा में आ जाता है। हवा में चिंगारियां भड़क उठती हैं। और आग लगने का खतरा रहता है।

एक और तरह भी हम बिजली से खतरा मोल लेते हैं। कई बार गांव में खम्भे से बिजली खींची जाती है। एक तार के नंगे सिरे को मोड़कर कांटे जैसा बनाया जाता है। फिर उसे फेंककर बिजली के खम्भे के तार से लटका दिया जाता है। लटकाई गई यह तार हवा से झूलती रहती है। खम्भे के तार पर यह इधर–उधर सरकती रहती है। इस वजह से तारों के बीच जगह बन जाती है। फिर वही होता है–खाली जगह से चिंगारी निकलती है और आग लगने का डर रहता है। कभी–कभी तो एक ही तार से कई घरों के लिए बिजली खींची जाती है। ऐसे में तार के अन्दर हद से ज़्यादा करंट दौड़ने लगता है। इससे तार गर्म होकर पिघलने लगता है। करंट बाहर निकलने लगता है। और फिर वही आग लगने का खतरा !

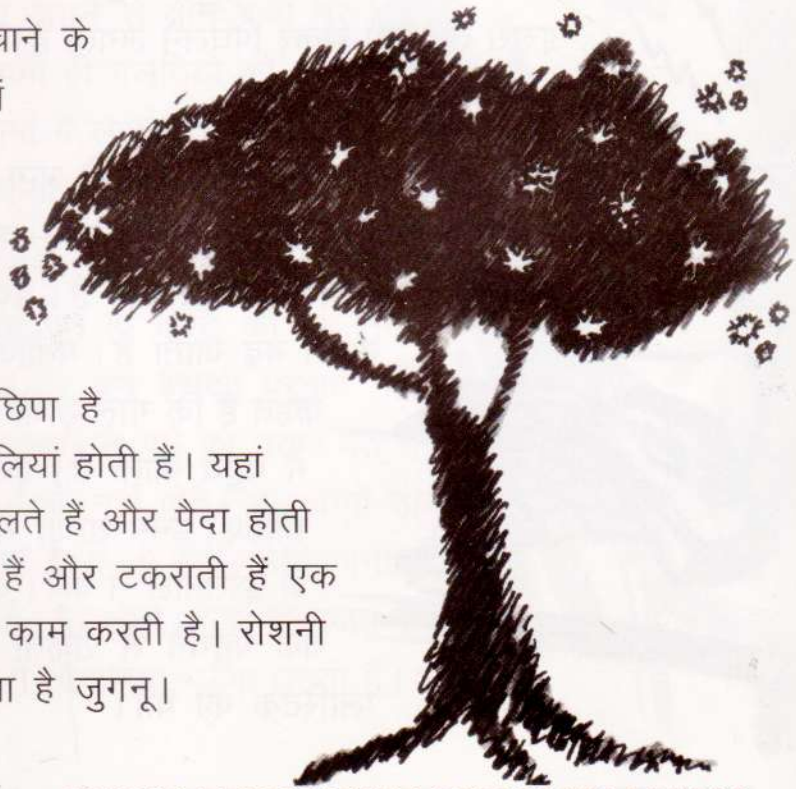


यह तो हुई लटकती और नंगी तारों से आग लगने की बात। इसके अलावा नंगी तारों को छूने से झटका लगने का भी डर रहता है। कभी–कभी झटका इतना ज़ोरदार होता है कि चिपकने का खतरा होता है। जान भी जा सकती है। बरसात के दिनों में नंगी तारों या ढीले जोड़ से यह खतरा बढ़ जाता है। क्योंकि पानी बिजली को अपनी तरफ खींचता है। तभी कहते हैं कि गीले हाथों से तार को न छुएं। तार से करंट तुरन्त हमारे शरीर में पहुंच जाता है। इससे बचने के लिए घरों में कुछ सावधानी बरतनी चाहिए। इनमें शायद सबसे ज़रूरी है कि बिजली की चीज़ों का बिना प्लग के इस्तेमाल न करें। क्योंकि प्लास्टिक का बना प्लग करंट को सीधे हम तक पहुंचने से रोकता है। यह हमें उसी तरह बचाता है जैसे तारों पर प्लास्टिक की पर्त।

चमक कर क्या कहते जुगनू

रात में जुगनू देखो तो देखते ही रह जाओ। चमकना, बुझना और फिर चमकना। ये तो सभी जुगनू करते हैं। लेकिन बुझने पर दुबारा कब चमकेंगे – कुछ कहा नहीं जा सकता। जितनी तरह के जुगनू, उतनी तरह की चमक। जुगनू होते भी दो हज़ार तरह के हैं। फिर अपना साथी ढूंढें भी तो, कैसे ? यह पहचान वे एक दूसरे की चमक देख कर ही करते हैं।

जुगनू प्रेम जताने के लिए ही नहीं, अपने को बचाने के लिए भी चमकते हैं। चमक कर कहते हैं –"हमें खाओगे, तो पछताओगे।" सच है ! जुगनू खाकर शिकारी पछताएगा ही। इतने कड़वे होते हैं जुगनू। लेकिन मेंढक को जुगनू खाना पसन्द है। और ज़्यादा खाए, तो मेंढक ही चमकने लगता है।



पर जुगनू खुद कैसे चमकते हैं ? इसका राज़ छिपा है पेट के निचले हिस्से में। जहां हवा से भरी कई नलियां होती हैं। यहां खास रस और पदार्थ भी होते हैं। ये हवा से मिलते हैं और पैदा होती है रोशनी। इसकी किरणें शरीर के अन्दर जाती हैं और टकराती हैं एक खास तरह की पर्त से। यह पर्त आईने की तरह काम करती है। रोशनी को बाहर की तरफ फेंकती है। और चमक उठता है जुगनू।

मै हूं छुई-मुई



हमें कोई ज़रा सा छू ले तो हम फौरन पलट कर देखते हैं। महसूस करना हमें ही नहीं, पौधों को भी आता है। छुई–मुई एक ऐसा ही पौधा है। आमतौर पर छुई–मुई की हरी पत्तियां खिली–खिली रहती हैं। पर जैसे ही इनको छुओ, ये आपस में सिमट जाती हैं। बारिश की बूंदों और तेज़ हवा से भी ऐसा होता है। और हरा–भरा पौधा पतली टहनियों जैसा दिखने लगता है। इसे देख गाय–बकरी भी चकमा खा जाती हैं।

छुई–मुई पौधों के महसूस करने का एक खास अंदाज़ भी है। छुई–मुई के एक बड़े पत्ते में बहुत सी छोटी पत्तियां जुड़ी होती हैं। बड़े पत्ते के बीच में एक मोटी नस होती है। और इसके दोनों तरफ पतली नसें निकलती हैं। इन्हीं पतली नसों पर यह छोटी पत्तियां जुड़ी होती हैं। इनके हर जोड़ पर एक छोटी सी सूजन होती है। इस सूजन के अन्दर दो हिस्से होते हैं। ऊपरी हिस्से में आमतौर पर पानी भरा रहता है। और निचला हिस्सा खाली होता है। ऐसे में पत्तियां खिली रहती हैं। छूने पर पत्तियों में लहर सी दौड़ जाती है। और सूजन के ऊपरी हिस्से का पानी निचले हिस्से में चला जाता है। इससे पत्तियां आपस में चिपक जाती हैं।



छुई–मुई में एक और मज़े की बात है। जिन पत्तियों को पहले छुआ, वही पहले बंद होती हैं। और जो पहले बंद होती हैं, वही पहले खुलती भी हैं। मानो बाकी पत्तियां कह रहीं हों–'तुमने ही बन्द होने की खबर दी थी। अब खुलने में भी तुम ही आगे बढ़ो।'

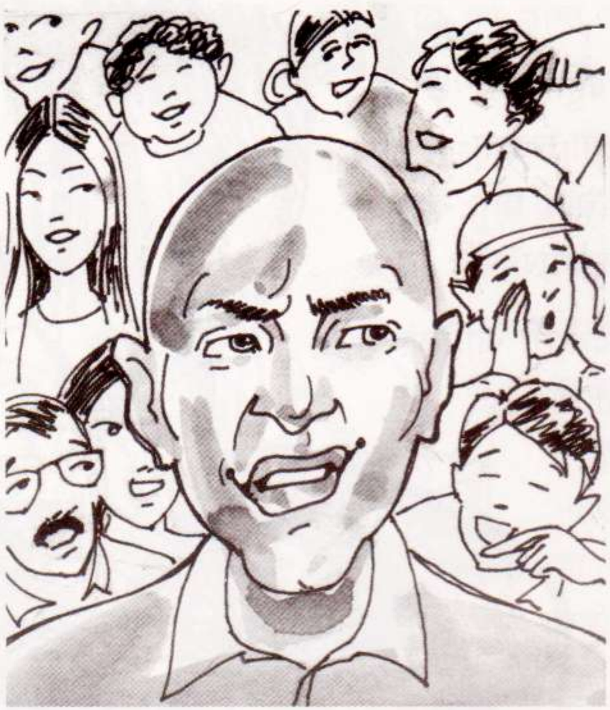
उफ ! ये गंजापन



गंजू पटेल तेरी खोपड़ी में तेल,
सीटी बजी और चल पड़ी रेल !

यह कहकर बच्चे खूब हंसते हैं। हम भी गंजे लोगों का मज़ाक उड़ाते हैं। इन पर न जाने कितने चुटकुले हैं। मगर जो गंजे हैं, वे रहते हैं परेशान। और ज़्यादातर यह दुख भोगते हैं आदमी। दाढ़ी, मूंछ, छाती और कानों तक पर बाल होंगे। बस सिर पर नहीं ! लेकिन बहुत ही कम औरतें गंजी होती हैं। ऐसा क्यों?

गंजेपन की वजह है शरीर में मौजूद टेस्टोस्टरौन नाम के हारमोन। हारमोन खास तरह के रसायन होते हैं। इनसे शरीर में कई बदलाव आते हैं। हारमोन अलग–अलग तरह के होते हैं। कुछ हारमोन औरतों में ज़्यादा होते हैं और कुछ आदमियों में ज़्यादा। आदमियों में टेस्टोस्टरौन की मात्रा ज़्यादा होती है। इसी के कारण लड़कों की दाढ़ी मूंछ आती है। आवाज़ भारी होती है। कभी–कभी यह हारमोन कम–ज़्यादा हो जाता है। तभी आदमी गंजे होने लगते हैं। कुछ औरतों में इस हारमोन की मात्रा ज़्यादा होती है। इसलिए वे भी गंजी हो सकती हैं आदमियों की



तरह। गंजापन विरासत में भी मिलता है। मानो बाप–दादा जल्दी गंजे हुए तो अगली पीढ़ी भी शायद यही भुगते।

गंजेपन से छुटकारा पाने के लिए लोग क्या नहीं करते। कोई खास तेल की मालिश करते हैं। कोई बाल उगाने की दवा खाते हैं। कोई विग कहलाने वाली नकली बालों की टोपी पहनते हैं।

आजकल एक नई तरकीब निकली है। इससे सिर पर दोबारा बाल उगाए जाते हैं। मानो खेत में चावल के छोटे पौधे लगा रहे हों। एक क्यारी के बाद दूसरी क्यारी। ऐसे ही धीरे–धीरे पूरे सिर को बालों से ढका जाता है। इससे बाल तो लग जाते हैं। पर जेब खाली होने का डर है! गंजेपन का यह इलाज मंहगा पड़ता है।



चाय की पत्ती, क्या-क्या रंग दिखाती !



वाह ! चाय भी क्या चीज़ है। दुनिया भर में पी जाती है। बहुत से लोग तो इसके पीछे दीवाने हैं। चाय न पिएं, तो दिन अधूरा सा लगता है। पर यह तो हुई आज की बात। लेकिन एक ज़माने में चाय पीने का रिवाज़ ही नहीं था। चाय का इतिहास लम्बा भी है और मज़ेदार भी।

सदियों पहले चाय पीने का सिलसिला शुरू किया कुछ आदिवासी जातियों ने। पर शौक के लिए नहीं। वे तो इसे दवा के रूप में पीते थे। ये जातियां पहाड़ी जंगलों में रहती थीं। वहां उगती जंगली चाय के गुण उन्होंने जाने। बस, कच्ची हरी पत्तियों को उबालकर पीने लगे। ऐसी दो जातियां हमारे देश में थीं। बाकी बर्मा और थाइलैण्ड नाम के देशों में थीं।

धीरे-धीरे पहाड़ी जंगलों से चाय की खबर चीन देश पहुंची। कच्ची हरी पत्तियों का कड़वा पानी राजा के ससुर को भा गया। वह इसे शौक के लिए पीने लगे। दोस्तों को भी चाय पीने पर मजबूर करते। दोस्त परेशान ! बहाने ढूंढते चाय से बचने के। पर कुछ लोग इसके स्वाद को बढ़ाने की कोशिश में जुट गए। उबली पत्तियों को भूना गया। पर इससे

बनी चाय को पीना अब भी मुश्किल था। फिर चाय में डाला गया नमक, प्याज़, अदरक, चावल और संतरे के छिलके। तब कहीं जाकर चाय गले से उतरी।



दो सौ साल पहले चाय हमारे देश भी पहुंची। यहां अंग्रेज़ों ने पहली बार इसकी खेती शुरू की। अब तो चाय छोटी–बड़ी सभी दुकानों पर मिलने लगी। चाय कई और देशों में भी पहुंची। यह जहां गई, लोगों ने उसे अपने हिसाब से इस्तेमाल किया। बर्फीले देशों में शरीर में गर्मी पैदा करने की ज़रूरत होती है। इसलिए वहां चाय में डाला गया घी और मक्खन। कोरिया देश में चाय का साथ निभाते हैं – कच्चे अंडे। पहले चाय का घूंट लो, फिर कच्चे अंडे को चूसो। और फिर चाय का घूंट भरो। और अमरीका में पी जाती है एक खास तरह की ठण्डी चाय।

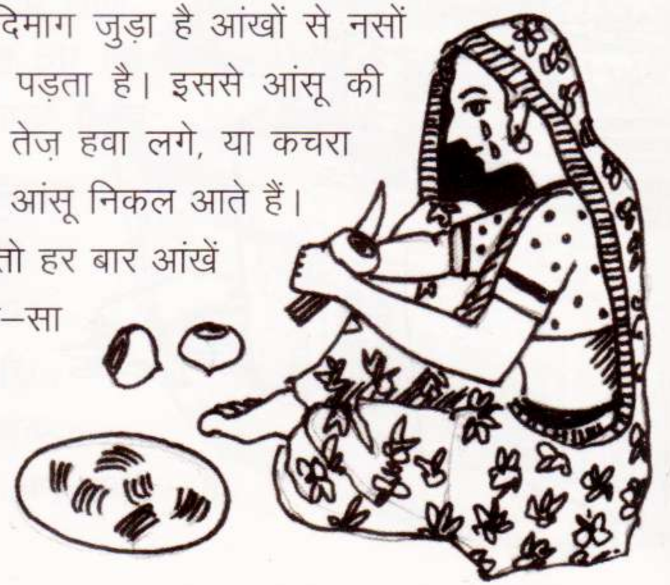
थाइलैण्ड में चाय से बनता है 'लैटपैट' नाम का पकवान। पत्तियों को पहले कई महीने ज़मीन में दबाकर रखा जाता है। फिर उसमें अदरक, नारियल, फल, मांस और तेल डाला जाता है। दूल्हा–दुल्हन इसे सुखी जीवन की कामना पूरी करने के लिए खाते हैं। चाय भी क्या चीज़ है – नाम एक, रूप अनेक।

पलकों में रहते आंसू

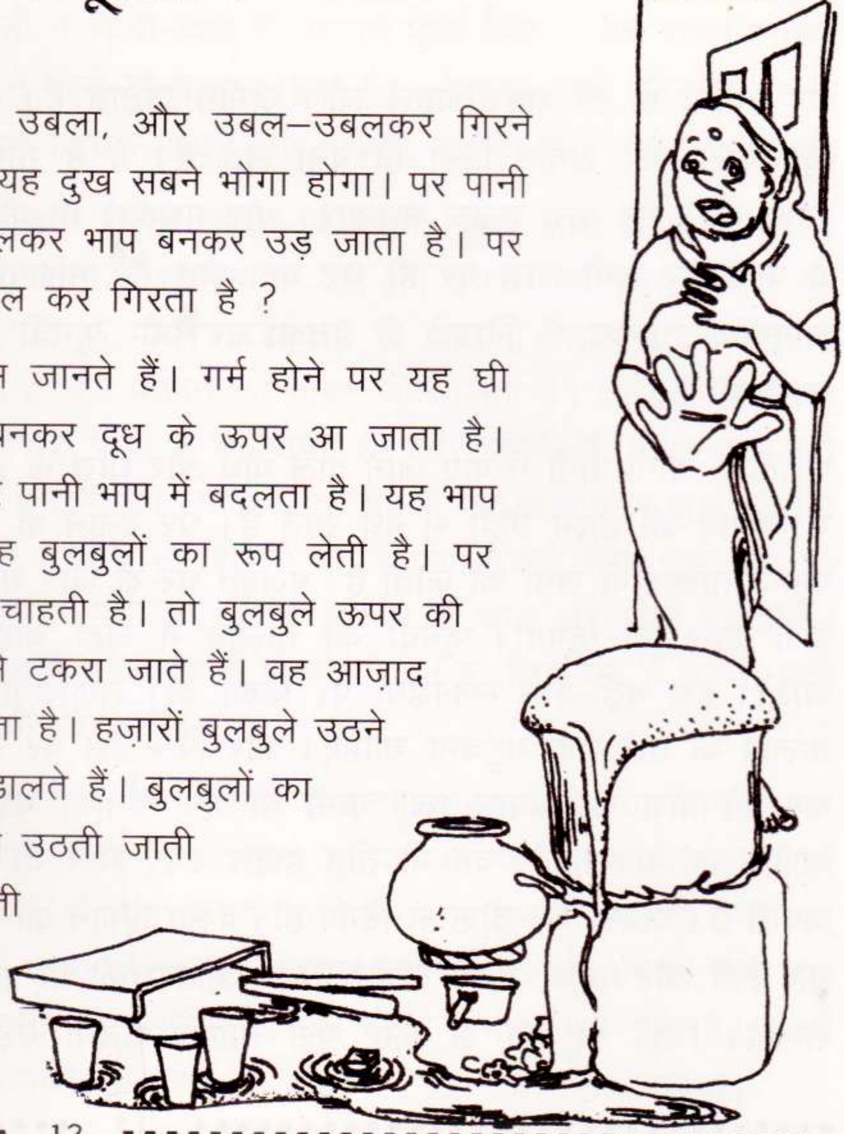
चखने में लगता हूं खारा, कहूं हाल दुख–सुख का सारा

आंसू ! आंखों से छलक जाएं, तभी दिखाई देते हैं। पर असल में आंसू हमेशा आंखों में रहते हैं। आंखों में खास थैलियां होती हैं जिनमें आंसू बनते हैं। यह थैलियां आंख के बाहरी कोनों में होती हैं। इन थैलियों से हमेशा आंसू निकलते हैं। यहां से जाकर आंसू ऊपरी पलक के अंदर जमा हो जाते हैं। और पलक झपकते ही पूरी आंख में फैल जाते हैं। उनके गीलेपन से आंखें हमेशा साफ रहती हैं।

यह तो हुई रोज़ की बात। लेकिन हम चाहें न चाहें, आंसू आंख से बहने लगते है। ये कैसे होता है ? पहले सुख–दुख की बात कर लें। हर कविता–कहानी खुशी और गम को जोड़ती है दिल से। लेकिन शरीर में सुख–दुख महसूस करता है – दिमाग। और दिमाग जुड़ा है आंखों से नसों द्वारा। सुख–दुख महसूस होने पर इन नसों पर दबाव पड़ता है। इससे आंसू की थैलियां दबती हैं। और आंसू बहने लगते हैं। आंखों को तेज़ हवा लगे, या कचरा घुस जाए – ऐसे में भी थैलियों पर दबाव पड़ता है। और आंसू निकल आते हैं। यह आंसू आंख को चोट से बचाते हैं। प्याज़ काटने पर तो हर बार आंखें भर जाती हैं। ऐसा क्यों ? काटने पर प्याज़ से पानी–सा निकलता है। यह हवा में मिलकर गैस बन जाता है। गैस आंखों में पहुंचकर जलन पैदा करती है। इससे थैलियों पर दबाव पड़ता है। और जलन मिटाने निकल पड़ते हैं आंसू !



उबल-उबल कर कैसे भागा दूध... ?

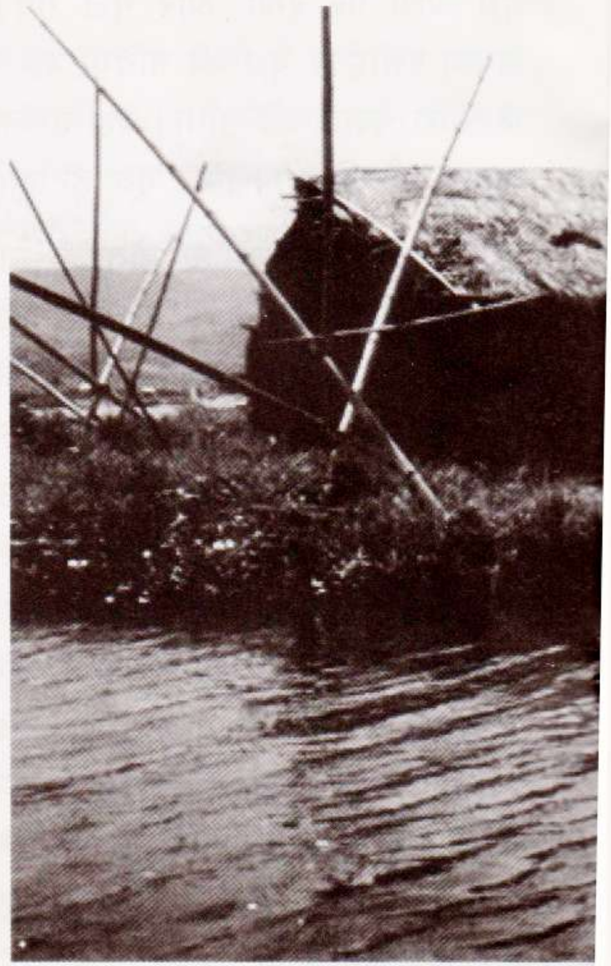


दूध आंच पर रखा, और भूल गए। दूध उबला, और उबल–उबलकर गिरने लगा। रसोई में दूध की नदियां बह गईं। यह दुख सबने भोगा होगा। पर पानी के साथ ऐसा नहीं होता। वह उबल–उबलकर भाप बनकर उड़ जाता है। पर बाहर नहीं गिरता। फिर दूध ही क्यों उबल कर गिरता है ?

दूध में घी पहले से ही होता है, यह हम जानते हैं। गर्म होने पर यह घी दूध से अलग हो जाता है। वह मलाई बनकर दूध के ऊपर आ जाता है। दूध में कुछ पानी भी होता है। गर्म होने पर पानी भाप में बदलता है। यह भाप दूध के अंदर फंसी होती है। इसलिए यह बुलबुलों का रूप लेती है। पर बुलबुलों में फंसी यह भाप आज़ाद उड़ना चाहती है। तो बुलबुले ऊपर की तरफ उठते हैं। और ऊपर तैरती मलाई से टकरा जाते हैं। वह आज़ाद नहीं हो पाते। धीरे–धीरे दूध गर्म होता जाता है। हज़ारों बुलबुले उठने लगते हैं। और नीचे से मलाई पर दबाव डालते हैं। बुलबुलों का ज़ोर बढ़ता जाता है। मलाई इस दबाव से उठती जाती है। ऊपर, और ऊपर... और बाहर गिर जाती है। बस, पलक झपकते ही दूध गिर गया। अब भाप हवा में आज़ाद हुई। और दूध जमीन पर....।

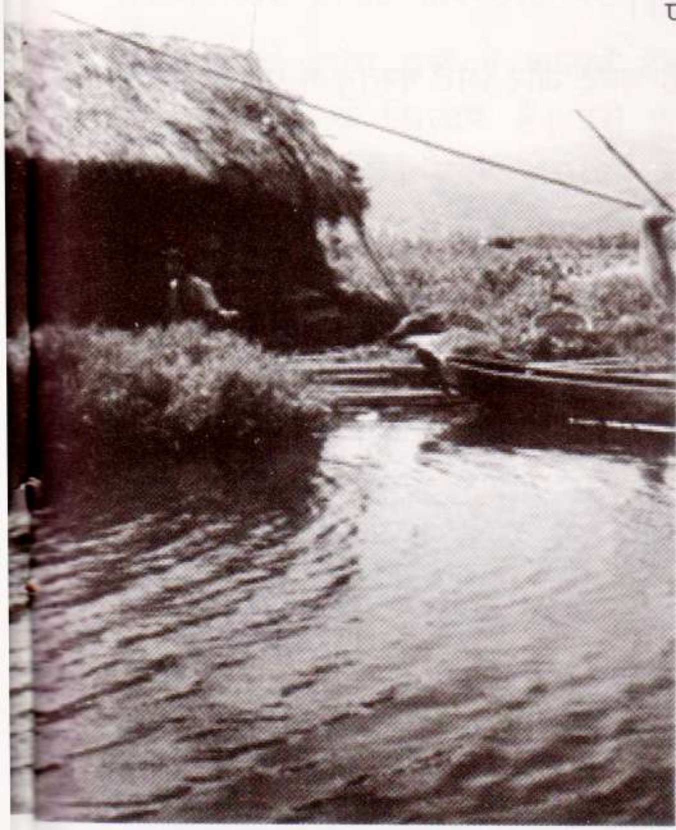
जहां नींव हो पानी की

घर बनाना हो तो सबसे पहले लोग ज़मीन जुटाते हैं। मगर कुछ लोग घर ज़मीन बिना ही बना लेते हैं। ये हैं मणिपुर राज्य के करीब पांच हज़ार मछुआरे। और मछुआरे भी कैसे ! ये पानी पर उगी घास पर ही घर बना लेते हैं। मणिपुर के लोकतक तालाब में दिखते हैं इनके घर। ये 'फूमदी' घर कहलाते हैं।



फूमदी – यानी पानी में पाए जाने वाले पौधे और घास के झुंड। ये तालाब की ढीली मिट्टी से बंधे रहते हैं। घर बनाने के लिए फूमदी तालाब से जमा की जाती है। मज़बूत घर के लिए चाहिए घनी घास की फूमदी। फूमदी को तालाब में जहां चाहे ले जाओ। इसे बड़ी-बड़ी लकड़ियों पर टिका दो। लकड़ियों को तालाब के तले तक पहुंचना चाहिए। और फिर इस पर खड़ा कर लो बांस का अपना घर। कभी तो बना बनाया घर भी खरीदा जा सकता है। वह भी तीन हज़ार रुपए में ! दो बातें ज़रूरी हैं। पहला, घर ठीक से टिका हो। वरना तूफान आने पर यह कहीं और पहुंच जाएगा। और बेचारे डाकिए की तो शामत समझो। चिट्ठी पहुंचाने के लिए पूरा तालाब ढूंढना पड़ेगा।

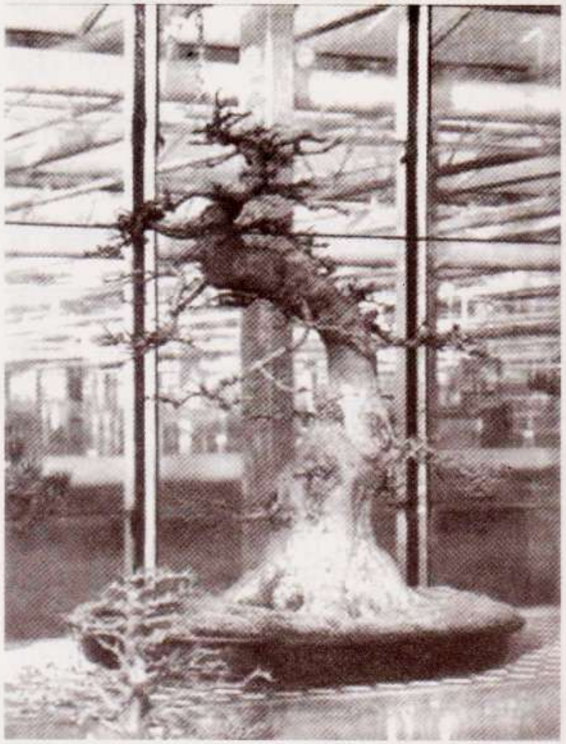
दूसरा, घर में ज़्यादा लोग न हों। कहीं किसी ने शादी-ब्याह में मेहमान बुला लिए – तब दावत तालाब के नीचे समझो। फूमदी में रहने से बड़ा फायदा है – बाज़ार जाने की ज़रूरत ही नहीं पड़ती। खाने लायक सब्ज़ी और मछली तालाब में ही मिल जाती है।



हर साल कुछ महीने तालाब का पानी सूख जाता है। और फूमदी पहुंच जाती हैं तालाब के तले में। इससे एक बड़ा फायदा है। फूमदी के पौधे ज़्यादा घने हो जाते हैं। तालाब की मिट्टी में उन्हें और पनपने का मौका जो मिलता है। बरसात में तालाब दोबारा पानी से भर जाता है। और फूमदी भी ऊपर आ जाती हैं। मगर अब लोकतक तालाब में एक बड़ा काम शुरू हो रहा है – पानी से बिजली बनाने का। इसके लिए एक बांध भी बनाया गया है। इससे तालाब में साल भर पानी रहता है। फूमदी हमेशा पानी पर तैरती है। इसलिए अब वे उतनी घनी नहीं हो पातीं।

लोकतक तालाब में ही है केइबुल लामजाओ। यह नाम है एक बहुत बड़ी फूमदी का। दुनिया की यह इकलौती तैरती हुई जगह है जहां जानवर रहते हैं। मगर इनके रहने की जगह को ही अब खतरा है। केइबुल लामजाओ अब हमेशा पानी पर रहता है। इसलिए इसकी मिट्टी कमज़ोर हो रही है। इसमें जानवर कब तक रह पाएंगे – यह समय ही बताएगा।

छोटे मियां सुभानअल्लाह



एक गमले में बरगद का पेड़, तो दूसरे में चीड़ का। फल–फूल से लदे कई छोटे पेड़। मानो सारा जंगल ही कमरे में समा गया हो। पेड़ ऊंचाई में छोटे। मगर उम्र में बरसों पुराने। ये कमाल है बोनसाई का।

बोनसाई का मतलब है चपटे और छोटे बरतन में पेड़ उगाना। लगभग सभी पेड़ों को बोनसाई बनाया जा सकता है। पेड़ की ऊंचाई और चौड़ाई तय करनी पड़ती है। उसी हिसाब से पौधे को तार से बांधा जाता है। टहनी में पत्थर बांधकर लटकाना – यह भी एक तरीका है। समय-समय पर जड़, पत्ते और टहनियों की कटाई–छंटाई करना ज़रूरी है। इसी तरह तैयार होता है बोनसाई। जितना छोटा पेड़, उतना ज़्यादा समय लगता है उसे तैयार करने में।



कहते हैं बोनसाई चीन देश में शुरू हुआ। कुछ लोग इसे हमारे देश की खोज मानते हैं। मगर बोनसाई जापान जाकर मशहूर हुआ। जापानी लोग वैसे भी हर चीज़ छोटे आकार की बनाते हैं। छोटी गाड़ियां, छोटे रेडियो, छोटे टी.वी. और छोटे पेड़।



बोनसाई को लोग घरों में सजाते हैं। लेकिन कुछ लोग बोनसाई के खिलाफ हैं। इसे कुदरत के साथ खिलवाड़ मानते हैं। मगर बोनसाई के चाहने वाले



कहते हैं – इससे पेड़ सुन्दर ही नहीं, मज़बूत भी बनते हैं। तभी तो कोई-कोई बोनसाई छह सौ साल तक टिके रहते हैं।

बाएं हाथ का खेल



कोई काम बहुत आसान हो तो कहते हैं – ये मेरे बाएं हाथ का काम है। ऐसा क्यों कहते हैं, कभी सोचा है आपने ?

आमतौर पर हम सभी काम दाएं हाथ से करते हैं। बायां हाथ बहुत कम काम आता है। पर कुछ लोग सब कुछ बाएं हाथ से करते हैं – लिखना, पकड़ना, खाना। ऐसा क्यों ?

हमारा शरीर बहुत से काम करता है। इसके लिए दिमाग बहुत ज़रूरी है। सांस लेना, देखना, उठना-बैठना – इन सब में दिमाग से ही आदेश मिलता है। पैर पर कीड़ा काट रहा हो तो दिमाग हाथ को उसे हटाने का आदेश देता है। अगर दिमाग आदेश न दे तो हाथ हिल नहीं सकता।

हमारा दिमाग दो भागों में बंटा है। दायां और बायां भाग। दिमाग का दायां भाग शरीर के बाएं अंग चलाता है। और बायां भाग दाएं अंग। आमतौर पर बायां भाग हावी रहता है। दाएं हाथ को उसकी कुशलता दिमाग के बाएं भाग से ही मिलती है। मगर



कुछ लोगों में दिमाग का दायां भाग ज़्यादा दमदार होता है। इस कारण उनका बायां हाथ ज़्यादा चलता है। और बायां हाथ सब काम कुशलता से कर लेता है। यह बाकी लोगों के सीधे हाथ के समान है।

पर समाज बाएं हाथ को अशुभ मानता है। पूजा-पाठ, चढ़ावा – सब दाएं हाथ से ही होता है। कहीं-कहीं तो बाएं हाथ को मैला हाथ माना जाता है। इसलिए बचपन से ही टोका जाता है – सीधे हाथ से खाओ ! कई बार ज़ोर-ज़बरदस्ती भी की जाती है। इस सब का बच्चों के दिमाग पर बुरा असर पड़ता है। कई बच्चे तो हकलाना शुरू कर देते हैं।

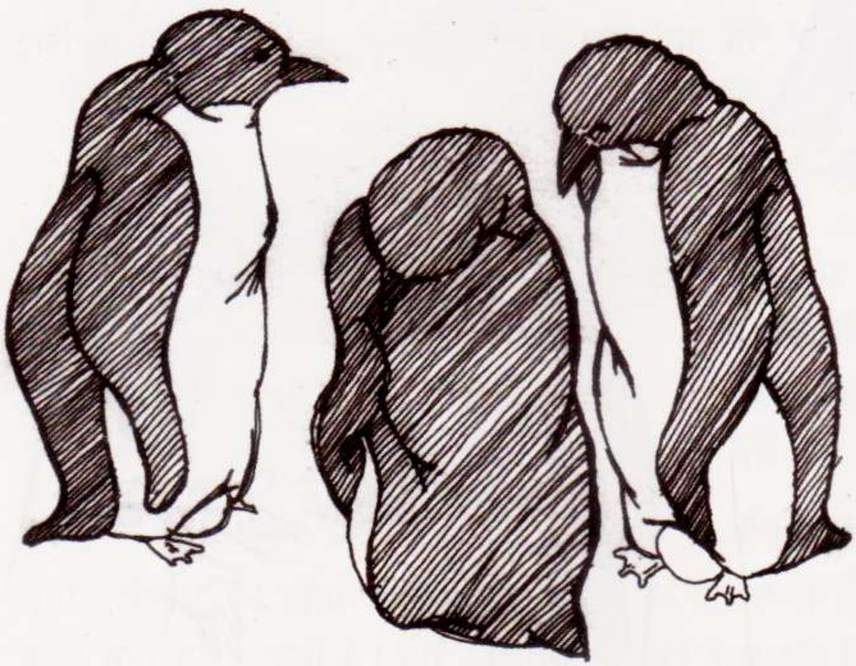


कोई दायां हाथ इस्तेमाल करे, कोई बायां हम सभी को एक जैसा होने पर मजबूर क्यो करें ?

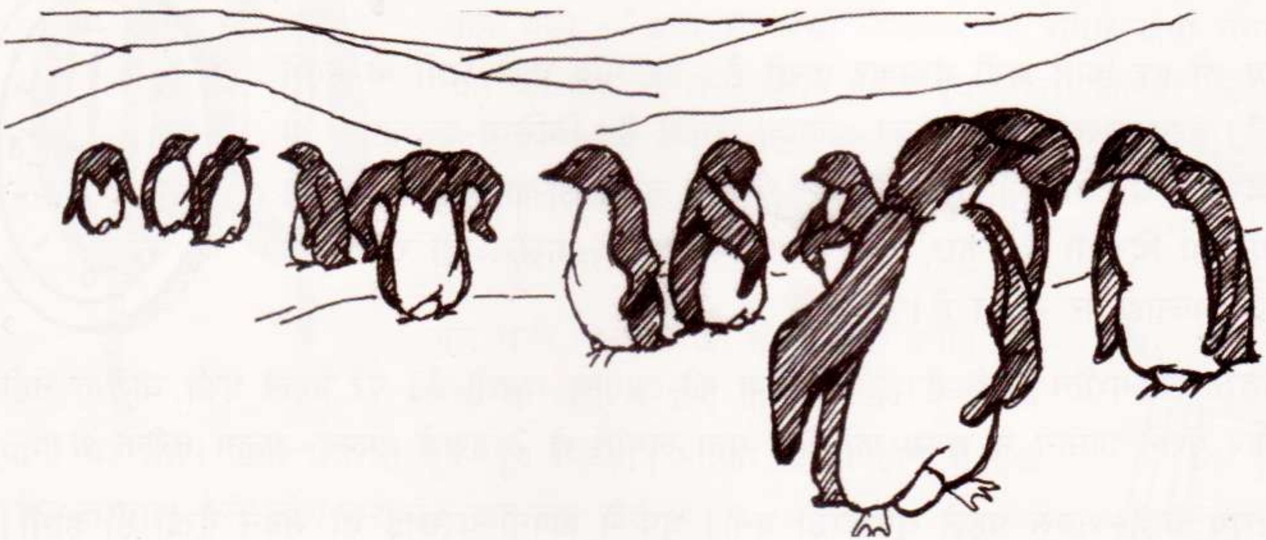
पिता हो तो ऐसा !

पेंगुइन – यह नाम है खास तरह के पक्षी का। यह हैं तो पक्षी पर उड़ नहीं सकते। यह ज़मीन पर दो पैरों से चलते हैं। और जिस पेंगुइन की हम बात करेंगे, वे आम पक्षियों से काफी बड़े हैं। अगर हम उनके साथ खड़े हों, तो वे हमारी कमर से भी ऊपर तक आएंगे।

ठंड के मौसम में अगर इनके इलाके में जाएं तो कुछ ऐसा नज़ारा दिखेगा – दूर-दूर तक फैली बर्फ। चलती तेज़ ठंडी हवाएं और सफेद बर्फ के बीचों-बीच खड़े ये पेंगुइन। कंधे से कंधा मिलाए, यह एक साथ खड़े होते हैं। दो महीने तक ये सब ऐसे ही खड़े रहते हैं। आस–पास बर्फ गिरे – इनको कुछ परवाह नहीं। आखिर इतनी ठिठुरती ठंड में यह ऐसे क्यों खड़े हैं ?



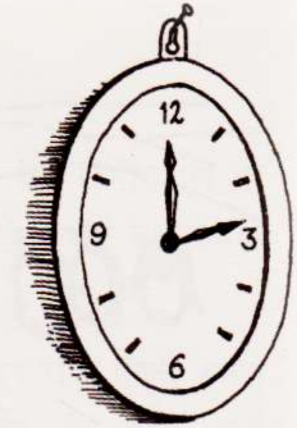
ये सारे पेंगुइन पिता पेंगुइन हैं। ध्यान से देखें तो सबके पैरों पर एक-एक अंडा नज़र आएगा। तभी तो उनको चलने-फिरने में इतनी मुश्किल हो रही है। ज़्यादा से ज़्यादा वे थोड़ा बहुत हिल-



डुल पाते हैं। और जब वे चल नहीं पाते, तो खाना कहां से मिले ? पर पिता पेंगुइन खाने के बिना भी अपना फर्ज़ निभाते हैं। उनका ध्यान तो अंडे पर ही टिका है। शरीर में पहले से जमा खाने से गुज़ारा करते हैं। दो महीनों तक खड़े–खड़े बेचारों का वज़न खूब कम हो जाता है।

इस समय मां कहां होती है ? मां पेंगुइन ने अंडा पैदा किया और पिता को दे कर चल पड़ी। वह दूर जाती है खाने की तालाश में। इधर बच्चा पैदा हुआ, उधर मां को पता चल गया। खूब सारा खाना लिए, फटा–फट लौट आई। और करने लगी बच्चे की देखभाल। पिता पेंगुइन को अब कुछ आराम मिला। और वह अपने लिए खाना खोजने निकल पड़ा। लौट आया जल्दी ही खा पीकर। अब मां और पिता मिलकर करने लगे बच्चे की देखभाल। उसे खिलाने लगे पहले से पचाया हुआ खाया ?

घड़ियों से एक मुलाकात

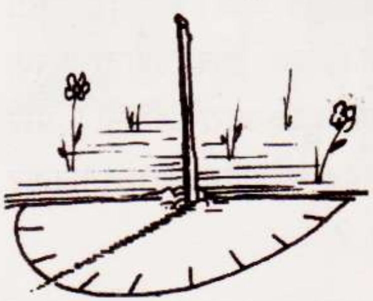


शहर के लोग तो हर काम घड़ी देखकर करते हैं। पर गांव वाले घड़ी के इतने गुलाम नहीं हैं। तरह–तरह से समय का अंदाज़ा लगाते हैं। चिड़ियां चहचहाएं, तो भोर हुई। मंदिर की घंटियां बजीं, तो सुबह हुई। सूरज ढला, तो शाम हुई। पर अब गांव में भी घड़ियां दिखती हैं। कुछ लोग दीवार पर टांगने वाली घड़ी रखते हैं। और कुछ घड़ी कलाई पर बांधते हैं।

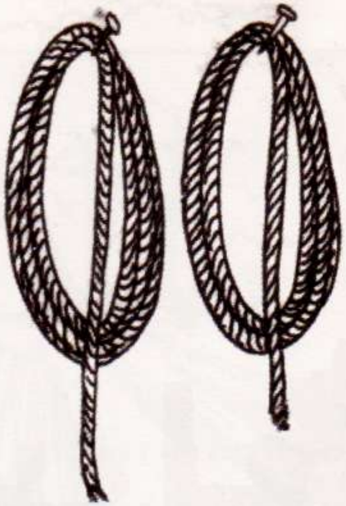
आज की घड़ियां तो मशीन जैसी हैं। टिक–टिक की आवाज़ करती हैं। पर पहले ऐसी घड़ियां नहीं होती थीं। फिर पुराने ज़माने में समय का कैसे पता लगाते थे ? इसके अलग–अलग तरीके थे।



धूप घड़ी–सबसे पहले धूप घड़ी बनी। धूप में अपनी परछाईं तो सबने देखी ही होगी। परछाईं हमेशा एक सी नहीं रहती। क्योंकि सूरज अलग–अलग दिशा में उगता और ढलता है। सुबह सूरज पूरब में उगता है। तब परछाईं लम्बी होगी, और पश्चिम की तरफ पड़ेगी। शाम को सूरज पश्चिम में ढलता है। तब भी परछाईं लम्बी होगी। पर वह पूरब की तरफ पड़ेगी। दिन में सूरज सिर के ऊपर होता है। तब परछाईं छोटी होगी।



साधुओं ने यह नियम देखा। सूरज और परछाईं का रिश्ता समझा। और समय नापने का अनोखा तरीका अपनाया। एक छड़ी ली और उसे ज़मीन में गाड़ दिया। उसकी परछाईं सूरज के हिसाब से बदलती रहती। इस तरह समय का पता चल जाता। पर यह घड़ी रात में बेकार थी। बिना धूप के धूप घड़ी किस काम की ?



आग घड़ी – आग से रस्सी जलाकर भी समय नापा गया। लोग एक नाप की कई रस्सियां लेते। पहले एक रस्सी जलाते। उसके पूरा जल जाने पर समय नापते। फिर एक–एक करके बाकी रस्सियां जलाते। इस तरह बीतते समय को नाप लेते।



जल घड़ी – पानी की भी घड़ियां बनीं। एक मटके के तले में छेद करते। फिर मटके में पानी भर देते। पानी छेद से बूंद–बूंद गिरता। मटका खाली होने में एक घंटा लगता। ऐसे लोग हर घंटे को नाप लेते थे।

रेत घड़ी – रेत से भी समय नापने का तरीका निकाला गया। रेत घड़ी दिखने में कुछ खास थी। मानो शीशे के दो गोले हों। एक पतली नली से जुड़े हुए। बारीक सूखी रेत ऊपर के गोले में भरी जाती। धीरे–धीरे रेत निचले गोले में गिरती। सारी रेत नीचे आ जाने तक का समय नापा जाता। ऐसे घंटे ही नहीं, मिनट भी नापे जाते।



ऐसे समय नापने के अनोखे तरीके निकाले गए। और वह भी आम चीज़ों का इस्तेमाल करके।



कैसे बनता है कागज़

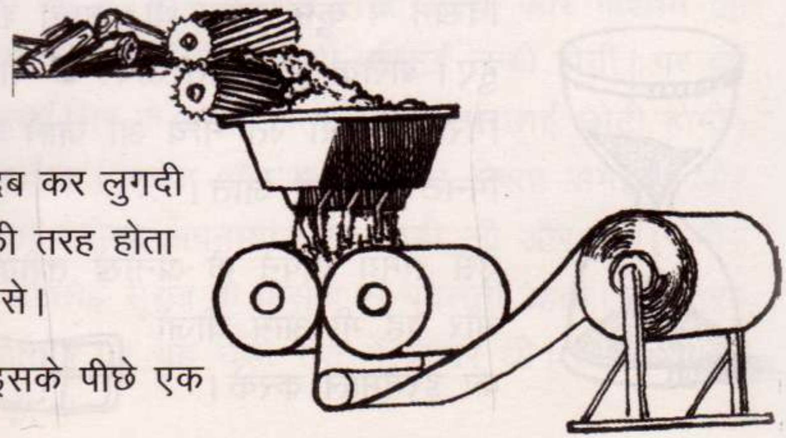


पेड़ आप रोज़ देखते हैं। और कागज़ अभी आपके हाथ में है। पेड़ और कागज़। कितने अलग–अलग लगते हैं। पर वे एक दूसरे से जुड़े हैं। कागज़ फल तो नहीं। जो पेड़ पर उगता हो। पर कागज़ पेड़ से ही बनता है। पेड़ की लकड़ी से। बड़े–बड़े कारखानों में।



कागज़ कुछ खास पेड़ों से बनता है। उनकी लकड़ी काटी जाती है। फिर शुरू होती है लकड़ी की यात्रा। लकड़ी जंगल से आती है कारखाने तक। यहां लकड़ी कई मशीनों से गुज़रती है। उसका रूप बदलता जाता है।

पहले लकड़ी की छाल उतरती है। फिर उसके छोटे–छोटे टुकड़े किए जाते हैं। टुकड़ों को पानी में मसला जाता है। ऐसे तैयार होती है लुगदी। दो गोल ड्रम होते हैं। लुगदी को उनके बीच दबाया जाता है। ऐसे दब–दब कर लुगदी कागज़ का रूप लेती है। यह कागज़ एक थान की तरह होता है। इसे फिर काटा जाता है। ज़रूरत के हिसाब से।



अगली बार हाथ में कागज़ हो तो याद रखना। इसके पीछे एक कटे पेड़ की कहानी है।

'विन्डोज़ टू द वर्ल्ड' (अंग्रेज़ी) – रु. 100/-

स्वास्थ्य की खोज में... (हिन्दी) – एक नज़रिया भाग 1 – रु. 50/-

खुद को जानें भाग 2 – रु. 75/-

अपने को पहचानें भाग 3 – रु. 75/-

अपना गांव अपना राज (हिन्दी) – पंचायती राज की जानकारी देती है यह किताब – रु. 20/-

मंटो (हिन्दी) – सआदत हसन मंटो की दो कहानियों का सरल हिन्दी में रुपान्तर – रु. 20/-

कहानियां नई पुरानी (हिन्दी) – तरह.-तरह की कहानियों का एक संकलन – रु. 20/-

बोलती है भाषा (हिन्दी) – भाषा सीखने वालों के लिए कार्यपुस्तिका – रु. 20/-

शिक्षिकाओं के लिए – रु. 35/-

'क्या आप जानते हैं?' की सहयोग राशि – 5 रुपए

किताब की प्रतियां मंगवाने के लिए लिखें :
निरंतर,
बी–64, सर्वोदय एन्क्लेव,
नई दिल्ली 110017
फोन : 26966334, फोन/फैक्स : 26517726
ई–मेल : nirantar@vsnl.com

पहला संस्करण : जनवरी 2004
लेखन व संकलन : निरंतर
प्रकाशन : निरंतर
आवरण : सुतनू पाणिग्राही
चित्रांकन : सुतनु पाणिग्राही, विजय बरनेला, निलाभो धर चौधरी, अनुपमा चटर्जी, नीरज सहाय, किरण चन्द्रा

प्रिंटिंग : चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट, आई.टी.ओ. के पास, नई दिल्ली

